दवा मूल्य नियंत्रण नीति अव्यावहारिक और अन्यायपूर्ण

एस. श्रीनिवासन, टी. श्रीकृष्णा एवं मालिनी आइसोला

सरकार और दवा लॉबी के दावों-प्रतिदावों के बावजूद औषधि (मूल्य नियंत्रण) आदेश 2013, जो कि कुल 71,246 करोड़ रुपए के दवा बाज़ार में से केवल 18 फीसदी हिस्से को ही कवर करता है, का दवा नियंत्रण नीति पर बहुत थोड़ा-सा ही सकारात्मक असर पड़ा है। यह आलेख इस बात का खुलासा करता है कि ऐसे कई मुद्दे थे, जिन्हें इस नीति में शामिल किया जाना चाहिए था। जबकि कई ऐसे मसलों को छोड़ा जा सकता था, जो इस नीति में शामिल हैं। इसके प्रावधानों से तो मैदान और भी असमतल हो गया है। पहले से ही दवाओं की अंधाधुंध कीमतों को लेकर परेशान उपभोक्ताओं के लिए इसमें दी गई बहुस्तरीय सीलिंग कीमतें और भी अन्यायपूर्ण हैं।

प्रेस में दवा क्षेत्र के वार्षिक आकलन और अगले तिमाही या छमाही की जो संभावनाएं जताई गई हैं, वे काफी निराशाजनक हैं। इसकी प्रमुख वजह औषधि (मूल्य नियंत्रण) आदेश 2013 (डीपीसीओ 2013) बताई गई है। लेकिन अगर हम डीपीसीओ 2013 के प्रभाव के सम्बंध में कुछ आंकड़ों पर नज़र डालें तो हमें ये निष्कर्ष थोड़े अतिशयोक्तिपूर्ण नज़र आएंगे।

सबसे पहले हम डीपीसीओ 2013 के कुछ प्रमुख प्रावधानों पर निगाह डाल लेते हैं:

- अनिवार्य औषधियों की राष्ट्रीय सूची (एनएलईएम) 2011 में शामिल सभी 348 दवाओं को उनकी निर्दिष्ट स्ट्रेंथ और प्रेज़ेंटेशन के साथ दवा नियंत्रण के तहत ले आया गया है।

- दवाइयों का अधिकतम मूल्य उन सभी ब्रांडस की औसत कीमत के आधार पर तय किया गया है जिनका बाज़ार में एक फीसदी से ज़्यादा हिस्सा है।

- 348 दवाइयों की विशिष्ट स्ट्रेंथ और प्रेज़ेंटेशन (कुल 620) को ही दवा नियंत्रण नीति के तहत लाया गया। इसका मतलब है कि इसमें से निम्नांकित श्रेणियों की दवाइयों को छोड़ दिया गया है:

(1) 348 अनिवार्य दवाओं के केवल विशिष्ट स्ट्रेंथ और प्रेज़ेंटेशन ही इस नीति में शामिल किए गए हैं। उदाहरण के लिए पैरासिटेमॉल की 650 मि.ग्रा. की गोली इसमें शामिल नहीं की गई है, क्योंकि एनएलईएम 2011 में केवल 500 मि.ग्रा. की गोली ही शामिल थी।

(2) सभी रासायनिक समतुल्यों को इससे बाहर रखा गया है। उदाहरण के लिए एटोरवैस्टैटिन को इसमें इसलिए शामिल किया गया क्योंकि यह एनएलईएम 2011 में शामिल थी। यह एकमात्र ऐसी स्टैटिन है, जिसका उल्लेख एनएलईएम 2011 में किया गया था, जबकि अन्य स्टैटिन जैसे कि रोसुवैस्टैटिन और सिमवैस्टैटिन को बाहर रखा गया है (कुछ स्टैटिन दवाइयों को 10 जुलाई 2014 के बाद अन-अनुसूचित औषधि के रूप में शामिल किया गया था)।

(3) एनएलईएम में शामिल दवाइयों के मिश्रण मूल्य नियंत्रण के दायरे से बाहर रखे गए हैं। जैसे दो एनएलईएम के मिश्रण या एक एनएलईएम और एक गैर-एनएलईएम दवा के मिश्रण को मूल्य नियंत्रण से बाहर रखा गया है।

इनके अलावा, दमा के लिए उपयोगी कई महत्वपूर्ण दवाओं को बाहर रखा गया है, जैसे कि मोनटेलुकास्ट। डायबिटीज़ के मामले में केवल ग्लिबेन्क्लेमाइड, मेटफारमिन और कुछ प्रकार के इन्सुलिन को ही मूल्य नियंत्रण के दायरे में रखा गया है। डायबिटीज़ की अन्य उपयोगी लेकिन महंगी दवाओं जैसे एमायरल, अकारबोस या ग्लिप्टिन्स को इससे बाहर रखा गया है (14 जुलाई 2014 के बाद इसमें

आंशिक संशोधन किया गया था)। यहां तक कि आयरन की कमी को दूर करने वाली बुनियादी औषधि फेरस सल्फेट व फॉलिक एसिड के मिश्रण और बहु-औषधि टीबी की दवाओं को भी इसमें शामिल नहीं किया गया है। इसी तरह मलेरिया की मात्र आर्टीसुनेट दवाओं को ही मूल्य नियंत्रण आदेश में शामिल किया गया है, जबकि फॉल्सीपैरम मलेरिया की तमाम दवाएं इसके दायरे से बाहर रख दी गई हैं। इसी तरह मेरोपेनेम, इमिपेनमसिलेस्टैटिन, टीजेसाइक्लिन, कॉलिस्टिन, एब्सीक्सिमैब, टिरोफिबैन, एप्टीफिबैटाइड, टैक्रोलिमस और अन्य कई महंगी दवाएं एनएलईएम से बाहर थीं, इसलिए इन्हें मूल्य नियंत्रण आदेश में भी शामिल नहीं किया गया।

वास्तविक कमी का स्तर

सरकार का दावा है कि मई 2013 में मूल्य नियंत्रण की घोषणा के बाद दवाइयों की कीमतों में काफी कमी आई है। लेकिन सरकार यह दावा करते समय जो तुलना करती है, वह डीपीसीओ 2013 आने से पहले बाज़ार के उस ब्रांड के साथ करती है, जिसके दाम सर्वाधिक थे (यानी जो प्राइस लीडर था)। दरअसल, कीमतों में यह तुलना अगर उस ब्रांड की कीमत के साथ की जाती, जिसकी बिक्री पिछले 12 महीनों में सबसे ज़्यादा हुई (यानी मार्केट लीडर) तो यह अधिक अर्थपूर्ण होता। गौरतलब है कि 339 दवाओं में से केवल 143 (42 फीसदी) ही प्राइस लीडर और मार्केट लीडर दोनों थीं।

कितनी गिरावट?

नवंबर 2013 में सर्वोच्च न्यायालय में सरकार द्वारा दाखिल हलफनामे के अनुसार दवाओं के 71,246 करोड़ रुपए के कुल घरेलू बाज़ार में से केवल 18 फीसदी यानी 13,097 करोड़ रुपए का बाज़ार ही मूल्य नियंत्रण आदेश के दायरे में आता है। यानी कि 58,149 करोड़ रुपए का दवा बाज़ार डीपीसीओ 2013 के दायरे से बाहर है। इनमें से भी 54.8 फीसदी (यानी 31,866 करोड़ रुपए) बाज़ार मिश्रित दवाइयों का है। इन मिश्रित दवाओं में से अधिकांश अनावश्यक हैं और दवाओं की बिक्री में सबसे बड़ा हिस्सा भी इन्हीं का है। अगर सरकार अवैज्ञानिक और बेतुके दवा मिश्रणों को बाहर कर दे तो इसमें भारी गिरावट संभव है।

इसी तरह के एक अन्य हलफनामे में श्रेणीवार उन दवाओं की बिक्री का विवरण दिया गया है जो डीपीसीओ 2013 में शामिल नहीं हैं : एंटी-डायबिटीज़ (86 फीसदी), एंटी-मलेरिया (88 फीसदी), एंटी-इन्फेक्टिव्स (63 फीसदी), एंटी-टीबी (81 फीसदी), रक्त से सम्बंधित (99 फीसदी), हृदय से सम्बंधित (71 फीसदी), त्वचा से सम्बंधित (90 फीसदी), गैस्ट्रोइन्टेस्टाइनल (85 फीसदी), स्त्री रोग सम्बंधी (86 फीसदी), लीवर-रक्षात्मक (100 फीसदी), एचआईवी सम्बंधी (73 फीसदी), हार्मोन्स सम्बंधी (56 फीसदी), तंत्रिका तंत्र सम्बंधी (82 फीसदी), नेत्र सम्बंधी (94 फीसदी), सेक्स उत्तेजना बढ़ाने वाली दवाएं (99 फीसदी), दर्दनाशक दवाएं (90 फीसदी), श्वास सम्बंधी (94 फीसदी), स्टोमैटोलॉजिकल्स (100 फीसदी), विटामिन/मिनरल्स/न्यूट्रीएंट्स (99 फीसदी), टीके (68 फीसदी) इत्यादि।

यहां एक बात और उल्लेखनीय है। जो 18 फीसदी दवाएं (बिक्री के अनुसार) मूल्य नियंत्रण आदेश में शामिल हैं, उनमें ऐसी दवाइयां भी हैं जिनकी कीमतें पहले ही निर्धारित मूल्य सीमा से कम हैं। यानी केवल मूल्य सीमा से ज़्यादा कीमत वाली ब्रांडेड दवाओं पर ही असर हुआ है। सवाल है कि कितना?

पब्लिक हेल्थ फाउंडेशन ऑफ इंडिया (पीएचएफआई) ने एनएलईएम में शामिल 250 दवाइयों के 2083 ब्रांड्स की पड़ताल की। इन ब्रांड्स की बिक्री करीब 11,268 करोड़ रुपए है। इससे पता चलता है कि केवल 47 फीसदी दवाइयां (यानी 982 ब्रांड्स, बिक्री 6,505 करोड़ रुपए) ही प्रभावित होंगी, क्योंकि केवल ये ही मूल्य सीमा से ज़्यादा कीमतों पर बेची जा रही थीं। इस तरह दवाओं की कुल कीमत में केवल 1290 करोड़ रुपए की ही कमी आएगी, जो वर्ष 2012 की कुल बिक्री का महज़ 1.8 फीसदी है। यह बताता है कि डीपीसीओ 2013 का दवाइयों के बाज़ार पर कितना कम असर पड़ेगा। अगर इसी तर्क को सभी अनिवार्य दवाइयों की बिक्री पर लागू किया जाए (हलफनामा

के अनुसार 13,097 करोड़ रुपए) तो कीमतों में कुल गिरावट 1,489 करोड़ रुपए की होगी, जो देश के कुल घरेलू दवा बाज़ार का महज दो फीसदी है। अगर हम इसमें आबादी का भाग दें तो देश के प्रति नागरिक को औसतन हर माह केवल एक रुपए का ही 'फायदा' होगा।

दवा उद्योग का दावा है कि डीपीसीओ 2013 के कारण दवा मार्केट में दामों में जितनी गिरावट आई है, वह उसके लाभ में गिरावट के बराबर है। हकीकत यह है कि कम कीमतों के कारण दवाइयों की बिक्री में बढ़ोतरी हुई है और बिक्री में साल-दर-साल जो सहज बढ़ोतरी होती है, वह अलग। कुछ लोग दवाइयों की कीमतों में 1489 करोड़ रुपए की इस गिरावट के कारण कह सकते हैं कि इस क्षेत्र में कमीशन में भी गिरावट आई है (एक अनुमान के अनुसार इससे रिटेलर्स के कमीशन में 16 फीसदी की गिरावट आई है)। देश में दवाइयों की खुदरा दुकानों की संख्या करीब सात लाख है। इस तरह प्रति दुकान कमीशन में 3400 रुपए सालाना की कमी आई है। निश्चित तौर पर रिटेलर्स और खासकर बड़े रिटेलर्स को नुकसान होगा, लेकिन यह नुकसान इतना भी नहीं है कि इससे कोई महासंकट खड़ा हो जाएगा। यदि दवा क्षेत्र और उसके व्यापारियों को कोई नुकसान होता भी है, तो वह बिक्री में होने वाली सालाना बढ़ोतरी से पूरा हो जाएगा।

इसके अलावा डीपीसीओ 2013 में यह प्रावधान भी किया गया है कि हर साल एक अप्रैल को थोक मूल्य सूचकांक के अनुरूप उन दवाओं की कीमतों में बढ़ोतरी की जा सकती है जो दवा नियंत्रण आदेश में शामिल हैं। इस नीति के दायरे से बाहर वाली दवाओं (यानी 82 फीसदी दवाएं) की कीमतों में सालाना 10 फीसदी बढ़ोतरी की अनुमति होगी।

सालाना वृद्धि में समस्याएं

डीपीसीओ 2013 के पैरा 13 (2) में कहा गया है कि आदेश की घोषणा के समय जो दवाएं मूल्य सीमा से कम दरों पर बेची जा रही थीं, उनके दामों को उसी स्तर पर फ्रीज़ कर दिया जाएगा। लेकिन इससे कम मार्जिन पर दवाएं बेचने वाले निर्माताओं को तब नुकसान उठाना पड़ेगा जब कच्चे माल की कीमतें बढ़ जाएंगी। ये कीमतें विभिन्न कारणों से साल में कभी भी बढ़ सकती हैं। डीपीसीओ की मूल्य पुनरीक्षण प्रकिया में कच्चे माल की कीमतों में होने वाली असामान्य बढ़ोतरी से निपटने के लिए कोई स्पष्ट प्रावधान नहीं किए गए हैं। अप्रैल 2014 में थोक मूल्य सूचकांक के अनुसार दवाओं के अधिकतम निर्धारित मूल्यों में 6 फीसदी की बढ़ोतरी की अनुमति दी गई थी, जबकि कच्चे माल के दामों में 12 फीसदी से भी अधिक की बढ़ोतरी हुई। नारफ्लॉक्सेसिन के मामले में 85 फीसदी और सल्फामेथॉक्सेज़ोल के मामले में 62.87 फीसदी की बढ़ोतरी हुई थी।

इसी तरह और भी कई अन्य दवाओं के कच्चे माल में काफी ज़्यादा बढ़ोतरी देखने को मिली। यहां इस मुद्दे को उठाने का हमारा मकसद यह बताना है कि कच्चे माल के दामों के साथ सीलिंग कीमतों की संबद्धता के अभाव में कई ज़रूरी दवाएं बाज़ार से बाहर हो सकती हैं, जैसा कि नारफ्लॉक्सेसिन, डॉक्सीसाइक्लीन, कोट्रायमोक्सेज़ोल और कई अन्य दवाओं के मामले में हुआ है। नारफ्लॉक्सेसिन के मामले में उसके निर्माताओं ने कीमत नियंत्रण से बचने के लिए अपनी औषधि में लैक्टोबैसिलस भी मिला लिया है। नारफ्लॉक्सेसिन, डॉक्सीसाइक्लीन और कोट्रायमोक्सेज़ोल (सभी मूल्य नियंत्रण के अधीन) के मामले में डीपीसीओ 1995 की अधिकतम कीमतों में कच्चे माल की लागत को शामिल नहीं किया गया था। इसलिए डीपीसीओ 1995 में अनुसूचित दवाओं की सीलिंग कीमतों का अप्रैल 2014 में किया गया संशोधन भी यथार्थ से कहीं दूर है।

डीपीसीओ 2013 के पैरा 13 (2) के कारण कम मार्जिन पर दवाएं बेचने वालों को दोहरा/तिहरा नुकसान उठाना पड़ा है। उदाहरण के लिए अगर कोई निर्माता मई 2013 में किसी दवा को प्रति स्ट्रिप 10 रुपए में बेच रहा था और मान लीजिए डीपीसीओ 2013 की सीलिंग कीमत उसी दवा के लिए प्रति स्ट्रिप 60 रुपए तय की गई हो, तब भी उस निर्माता को अपनी दवा प्रति स्ट्रिप 10 रुपए में ही बेचनी होगी। ऐसे में अगर कच्चे माल की कीमतों में असामान्य

बढ़ोतरी होती है तब भी उसे पैरा 13 (2) के अनुचित प्रावधान के कारण दाम बढ़ाकर कच्चे माल की कीमतों में बढ़ोतरी को एडजस्ट करने की अनुमति नहीं होगी। यहां तक कि ज़्यादा मार्जिन लेने वाले बड़े निर्माताओं के लिए भी इसे वहन करना आसान नहीं होगा क्योंकि कोई भी लंबे समय तक नुकसान नहीं झेल सकता। तो मझले और छोटे निर्माताओं या शायद अधिकांश दवा निर्माताओं के लिए तो और भी ज़्यादा मुश्किलें होंगी जो काफी कम मार्जिन पर व सीलिंग कीमतों से काफी कम दामों पर दवाएं बेचते हैं। तो इसका मतलब यही है कि भेदभावकारी पैरा 13 (2) को तुरंत हटा दिया जाना चाहिए। लेकिन ऐसा नहीं हो कि इसे हटाते-हटाते इतना अधिक विलंब हो जाए कि भारी नुकसान के चलते दवा निर्माता अपने उस उत्पाद को बंद ही कर दें और अंततः उसकी पूरी कंपनी ही बंद हो जाए।

गैर-अनुसूचित दवाएं

राष्ट्रीय औषधि मूल्य निर्धारण प्राधिकरण ने 10 जुलाई 2014 को 108 फार्मूले/डोज़ में 50 दवाइयों के लिए अधिकतम कीमतें अधिसूचित की। ये एनएलईएम 2011 में शामिल नहीं हैं और इस तरह ये गैर-अनुसूचित दवाएं हैं। इन दवाइयों को मूल्य नियंत्रण में शामिल करने के लिए डीपीसीओ के पैरा 19 का सहारा लिया गया जो कहता है : 'अगर सरकार को किसी असाधारण परिस्थिति में जनहित में किसी दवा की सीलिंग या खुदरा कीमत तय करना आवश्यक लगता है तो वह ऐसा कर सकती है।'

बहुराष्ट्रीय दवा कंपनियों की लॉबिंग करने वाले संगठन आर्गेनाइज़ेशन ऑफ फार्मास्यूटिकल प्रोड्यूसर्स ऑफ इंडिया (ओपीपीआई) और 20 प्रमुख भारतीय दवा कंपनियों के नेटवर्क दी इंडियन फार्मास्यूटिकल अलाएंस (आईपीए) ने सरकार के इस कदम का विरोध किया है और अधिसूचना को रद्द करवाने के लिए अदालत का दरवाज़ा खटखटाया है। उनका तर्क है कि पैरा 19 में प्रदत्त अधिकार का इस्तेमाल करना अवैधानिक है। उन्होंने इस कार्रवाई में जनहित का भी सवाल उठाया। इस लॉबी का तर्क था कि एनएलईएम 2011 में दी गई दवाइयों को ही मूल्य नियंत्रण के दायरे में लाया जा सकता है। इस मामले में अंतिम निर्णय तो अदालत को ही करना है, लेकिन हमारा मानना है कि यहां दवा लॉबी गलत है।

50 दवाइयां जिनमें से अधिकांश एंटी-डायबिटिक और हृदय रोग से सम्बंधित हैं, की कीमतें बहुत ज़्यादा हैं। कुछ भी हो, इन दवाओं की सीलिंग कीमतों में मार्जिन बहुत ज़्यादा है और इनमें कमी करने की ज़रूरत है। लेकिन इसमें त्रुटि गैर-अनुसूचित दवाओं (नॉन शेड्यूल्ड ड्रग्स) के लिए सीलिंग कीमत तय करने वाली पद्धति में है।

एंटी-डायबिटिक और हृदय रोग की दवाइयों के खुदरा मूल्यों में कमी करना जनहित में है। अगर यह कमी की जाती है तो बहुराष्ट्रीय कंपनियों की बिक्री में 171 करोड़ रुपए की गिरावट आएगी (अधिसूचित फार्मूलों की 903 करोड़ रुपए की बिक्री का 19 फीसदी)। आईपीए से सम्बंधित कंपनियों की बिक्री में 173 करोड़ रुपए की कमी आएगी (अधिसूचित फार्मूलों की 2338 करोड़ रुपए की बिक्री का 7.4 फीसदी)। अगर कुल घरेलू बाज़ार में होने वाली बिक्री से मिलने वाले राजस्व में गिरावट को देखें तो यह क्रमशः 1 और 0.5 फीसदी होगी। ऐसे में इस मामले में हो-हल्ला अनावश्यक है, क्योंकि हर साल अप्रैल में कीमतों में दस फीसदी इज़ाफे की अनुमति तो होगी ही। फिर हर वर्ष बिक्री में जो सहज बढ़ोतरी होती है, उसका फायदा अलग से मिलेगा ही।

एनपीपीए के अध्यक्ष का कहना है कि अन्य श्रेणियों जैसे दमा-रोधी दवाइयों को पैरा 19 के अधीन लाया जाएगा। इससे उपभोक्ताओं को कुछ राहत मिल सकेगी। लेकिन दवा कंपनियों के लिए लॉबिंग करने वाले इस कदम को रोकने के लिए हर स्तर पर प्रयास कर रहे हैं। अगर मोदी सरकार वाकई गंभीर है तो उसे दवा कंपनियों के हथकंडों के आगे न झुकते हुए एनपीपीए अध्यक्ष को पूरी स्वतंत्रता से काम करने देना चाहिए। ***(स्रोत फीचर्स)***